संगीत की तीनों विधाओं में (शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम संगीत) 'गीत' - एक अध्ययन

डॉ. अंजू सूर्यभान फुलझेले

सहा. प्राध्यापक, संगीत विभाग
अमोलकचंद महाविद्यालय, यवतमाल - 445001 महाराष्ट्र

प्रस्तावना- संगीत वह माध्यम है जो हमारी भारतीय संस्कृति की पहचान बताता है । संगीत हमारी अमूल्य धरोहर है, विरासत है, जो सदियों तक जन कल्याण में प्रेम व सद्भाव का संदेश देती है । यह एक ऐसी कला है जो भावनाओं की अभिव्यक्ति द्वारा सरल, सुंदर रूप से प्रस्फुटित होती है । पं. शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर के अनुसार - गायन, वादन एवं नृत्य तीनों को संगीत कहा जाता है । 1 'गीयते इति गीतम'। 2 अर्थात जो गाया जाता है उसे 'गीत' कहते है । संवेदना के साथ गाय जानेवाला 'गीत' संगीत कहलाता है । हमेशा से 'गीत' गाने की परंपरा रही है । ये कोई नहीं बता सकेगा की पहले हम या 'गीत'? इसका उत्तर यही हो सकता है - मनुष्य के साथ ही गीत का जन्म हुआ होगा । गीत का प्रारंभिक रूप अथवा उसका निरंतर विकास जैसा भी रहा हो ये गीत हमारे जीवन से जुड़े हुए है । शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत और सुगमसंगीत इन तीनों विधाओं को जोड़ने वाला महत्वपूर्ण अंग गीत ही है। इस शोध कार्य में तीनों विधाओ के अंतर्गत आनेवाले गीत का महत्व, उसके घटक (स्वर, शब्द, ताल), उसकी आवश्यकता इत्यादि विषयों पर अध्ययन किया गया है ।

बीज शब्द - संगीत, गीत, शब्द, राग, बंदिश ।

शोध का उद्देश -

संगीत की किसी भी गीत शैली में 'गीत' यह मुख्य अंग होता है। गीत में आए हुए विषय वर्णन के अनुसार उस गायन शैली की पहचान होती है। संगीत की तीनों विधाओ के अंतर्गत आनेवाले 'गीत' का संक्षिप्त विवरण दिया है।

अनुसंधान पद्धति -

प्रस्तुत विषय वस्तु को समझने के लिए तीनों विधाओ में गीत का महत्व, घटक, आवश्यकता आदि का संक्षिप्त वर्णन दिया गया है।

भूमिका -

भारत की संस्कृति का विकास हम जिस प्रकार से निरंतर होता हुआ देख रहे है, उसी प्रकार संगीत कला भी विकसनशील होती हुई दिखाई दे रही है। वैदिक काल मे साम ही संगीत का प्रतिनिधित्व करता था तथा ईश्वर वंदना का सर्वोत्कृष्ट माध्यम था। इसी काल में संगीत का विकास होता गया और भिन्न- भिन्न देश तथा काल के लोगों की रुचियों में भी परिवर्तन हुआ जिससे संगीत का क्षेत्र धीरे-धीरे विकसित होता गया। शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत इन विधाओं में 'गीत' एक दूसरे से पूरक है। इसीलिए यह संशोधन कार्य संशोधन पात्र के स्वरूप में प्रस्तुत है।

कुछ विद्वानों द्वारा संगीत की परिभाषा इस प्रकार से है -

संगीत -

"गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीत मुच्यंते।" [3]

शारंगदेव कृत संगीतरत्नाकर के अनुसार - गायन, वादन एवं नृत्य तिनों को संगीत कहा जाता है।

"गीथते इति गीतम् ।" [4]

अर्थात जो गाय जाता है उसे गीत कहते है।

पं. कल्लिनाथ ने भी संगीत शब्द से गायन, वादन और नृत्य तिनों का अर्थ संग्रहित किया है।

पं. भातखंडे -

संगीत समुदाय वाचक नाम है। इनमें तिनों कलाओं का समावेश किया गया है।[5]

उपरोक्त सभी विद्वानो द्वारा संगीत की परिभाषा से यही ज्ञात होता है की गायन, वादन और नृत्य इन तिनों कलाओं का मिश्रण संगीत कहलाता है। संगीत की परिभाषा ही 'रंजक' गीत है और रंजकता गीत का प्राण है। संगीत यह मानविय जीवन का मूलभूत पहलू रहा है। संगीत ही ईश्वर की भक्ति का मार्ग है।

गीत की परिभाषा :

गीत शब्द 'गै' धातु से बना है। 'गै' का अर्थ होता है 'गाना'। गीत शब्द संगीत और साहित्य दोनों का सूचक है। दोनों भी कलाए वैदिक काल से आज तक से विकसित होती रही। गीत की परिभाषा विद्वानों द्वारा कुछ इस प्रकार है।

नाट्यशास्त्र ग्रंथ के ग्रंथकर भरतमुनि :

इस ग्रंथ के 31वे अध्याय में नाट्यसंगीत के दो भेद मिलते है - गान तथा गंधर्व। गीत - स्वर, लय, ताल और छंद से युक्त जो गान होता है वह गीत है। स्वर, ताल, पद, मार्ग इन चार अंगों से युक्त ध्रुवा प्रकार को गीत कहते है।[6]

संगीत रत्नाकर ग्रंथ के ग्रंथकार पं. शारंगदेव :

गीत की परिभाषा इस प्रकार करते है - "स्वरों का वह समुदाय जिससे मन का रंजन हो 'गीत' कहलाता है।" [7]

पं. कल्लीनाथ के अनुसार :

"प्रीति कर स्वर-संदर्भ का नाम गीत है। इसके तीन अंग माने गाए हैं- स्वर, ताल और पद।" [8]

पं. शारंगदेव के अनुसार :

"गान के अधीन वादन और वादन के अधीन नर्तन है। अतः इन तीनों कलाओं में 'गान' को ही प्रधानता दि गई है।" [9]

उपरोक्त सभी ग्रंथकारों ने अपने ग्रंथों में 'गीत' शब्द को गायन के लिए प्रयुक्त किया गया है।

विभिन्न शब्द- कोशों में गीत का अर्थ इस प्रकार से बताया गया है :

नालंदा विशाल शब्दसागर के अनुसार :

वह वाक्य या छंद जो गया जाए। [10]

लोकभारती प्रामाणिक हिन्दी कोष के अनुसार:

वह वाक्य या छंद जो गया जाता है गाना। [11]

द इन्साइक्लोपीडीया इंडिया, हिन्दी शब्द कोष में:

गान, गाना, ध्रुपद, तराना आदि। यह नियमित स्वर निष्पन्न शब्द विशेष है ।[12]

हिन्दी विश्वकोश के अनुसार :

जो स्वर, पद व ताल से युक्त जो गान होता है वह गीत कहलाता है। [13]

उपरोक्त सभी परिभाषाओं और शब्दकोषो से 'गीत' के संबंध में यही सार निकलता है की कुछ विशेष 'शब्द' जो स्वरों से युक्त होकर, किसी लय विशेष में प्रस्तुत किए जाते है तब उसे 'गीत' कहते है ।

संगीत में शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम ऐसे भेद दिखाई देते है। इस भेद की कुछ सीमा रेखाएँ है। इन तिनो विधाओ में स्वर, लय और वर्ण ये इनके मूख्या घटक है। इनका स्वतंत्र अस्तित्व होकर भी ये आपस में जुडी हुई होती है। असंख्य राग - रागिनियाँ, गायन शैलिया, वाद्यों का आविष्कार, शास्त्रपक्ष, श्रुती - स्वर मुर्च्छना, स्वर-संवाद इत्यादि विशेषताओं के कारण आज हमारा भारतीय संगीत विश्वस्तर पर विराजित है। संगीत की तिनों विधाओं का अल्प परिचय इस प्रकार से है।

शास्त्रीय संगीत -

शास्त्रीय अर्थात शास्त्रोक्त, नियमबद्ध तथा जिसमें शास्त्रपालन कटिबद्धता से होता है अथवा विशिष्ट प्रकार का संगीत जिसका शास्त्रों में वर्णन हुआ है, उसे 'शास्त्रीय संगीत' कहते है । यह एक ऐसा संगीत है जो स्वर, ताल, लय एवं राग के शास्त्रीय नियमों के आधार पर गाया - बजाया जाता है ।

शास्त्रीय संगीत में राग संकल्पना होती है। वे एक दूसरे से संबंधित होते है। सम्पूर्ण शास्त्रीय संगीत की निंव राग पर खडी होती है। तथा सम्पूर्ण राग बंदिश के इर्द-गिर्द घुमता है। शास्त्रीय संगीत में ख्याल गायन, ध्रुपद-धमार तराना इत्यादि गीत-शैलियाँ गायी जाती है। इन गीत शैलियोंके गायन में त्रिताल, झपताल, तिलवाड़ा, एकताल इत्यादि तालों का प्रयोग किया जाता है।

शास्त्रीय संगीत के संदर्भ में विद्वानों द्वारा कहे गए कथन इस प्रकार से है -

डॉ. मुकेश गर्ग -

शास्त्रीयता का अभिप्राय अभी तक यही लगाया जाता रहा है कि ऐसा संगीत, जिसमें शास्त्रीय विधि-निषेधों को आँख बंद करके प्रयोग किया जाता हो, भले ही वह स्वर-ताल की दृष्टि से हमारी अनुभूतियों को स्पर्श करने में सक्षम हो अथवा असक्षम। [14]

डॉ. प्रभा अत्रे -

इस प्रकार में आनेवाले रचना प्रकार का उद्देश राग का सर्वांग दर्शन कराना होता है। राग, यह संकल्पना ही अमृत (Abstract) है। सम्पूर्ण संगीतमय संकल्पना है। इसमें संगीत केवल स्वयं के अस्तित्व के लिए ही प्रयोज्य है। ऐसा होते समय शब्द की नादाकृति तथा भावपूर्ण आशय की दृष्टि से शब्द स्वयं का अस्तित्व खो देते है। ध्रुपद, घमार, ख्याल, तराना जैसे रचना प्रकार इस वर्ग में आते है। प्रत्येक रचना-प्रकार राग की भिन्न-भिन्न विशेषता व्यक्त करता है तथा इस शब्द उनके सहायक होते है। [15]

उपशास्त्रीय संगीत -

शास्त्रीय संगीत के शास्त्र कठिन होते है किन्तु उपशास्त्रीय संगीत के प्रत्येक शास्त्र में लोच, सुगमता होती है। शास्त्रीय संगीत के कठोर नियमों को थोड़ा शिथिल करके भावों को अभिव्यक्त करने वाला संगीत 'उपशास्त्रीय संगीत' के श्रेणी में आता है ।

इस विधा में स्वर और शब्द दोनों का महत्व बराबर का होता है। ठुमरी, दादरा, चैती, कजरी, झूला, बारहमासा, होरी इत्यादि गीत प्रकार गाए जाते है। दादरा, कहरवा, अद्धा-त्रिताल, भजनि कहरवा इत्यादि तालों में ये गीत प्रकार गाए जाते है। खटका, मुर्की, बेहलावे बोल-बाट, पुकार इत्यादि सूक्ष्म अवयवों का प्रयोग इस गायकी में होता है।

उपशास्त्रीय संगीत के संदर्भ में विद्वानों के कथन इस प्रकार से है :

श्रीमती कुसुम शेंडे :

उपशास्त्रीय संगीत को ललित भी कह सकते है। इस प्रकार के गायन भेद में संगीत के रस-भावपक्ष पर विशेष ध्यान दिया जाता है। अतः इस गायनशैली को काफी हद तक शब्दप्रधान संगीत कहा जाता है। इस शबदप्रधानता में भी स्तर-भेद मिलते है। उदाहरण के लिए, ठुमरी को लिया जाए। ठुमरी में बोल-बनाव, स्वरलालित्य, ठेके की भंगिमाएँ इत्यादि के द्वारा संगीत को भी काफी मात्र में प्राधान्य दिया जाता है। [16]

डॉ. सुधा सहगल और डॉ. मुक्ता :

यह भारतीय संगीत का अंग है । जिस तरह शास्त्रीय संगीत राग के नियमों में बद्ध होता है, उपशास्त्रीय संगीत में रगों का आधार लिया जाता है।

उपशास्त्रीय संगीत का अस्तित्व शास्त्रीय संगीत के स्त्रोत से निःसृत हुआ है। शास्त्रीय अर्थात शास्त्रोक्त (नियम परिबद्ध), उपशास्त्रीय संगीत अर्थात शास्त्र के समीप रहने वाला। उपशास्त्रीय संगीत अर्थात ऐसा संगीत जो शास्त्र के निकट रहे तथा जिसमें शास्त्रपालन कटिबद्धता से नहोलर शिथिलता से होता है।

उपशास्त्रीय संगीत में शास्त्रीय पक्ष (राग-शुद्धता) से अधिक भाव सौन्दर्य एवं रस माधुर्य उसके भावपक्ष पर बल दिया जाता है। इन भावों को स्पष्ट करने का माध्यम 'स्वर' ही है। ऐसे संगीत में शृंगारिक भावना अधिक होती है। [17]

लावण्या कीर्ति काव्य :

शास्त्रीय संगीत के प्रत्येक अंग के शास्त्र अत्यंत कठिन है और उपशास्त्रीय संगीत के प्रत्येक शास्त्र में थोड़ी लोच, सुगमता क्षम्य है अथवा गांभीर्य एवं नियमों में शिथिलता संभव है। यही कारण तर्कसंगीत प्रतीत होता है की ठुमरी को 'उपशास्त्रीय' संज्ञा दि है। [18]

सुगम संगीत :

सुगम संगीत जनमानस के लिए सरल तथा सहज रूप से गाया जानेवाला संगीत होता है। इस विधा को शब्दप्रधान गायकी भी कहा जाता है। जन मानस में सुगम संगीत को लोकप्रिय बनाने में गजल, भक्तिगीत, फिल्मी गीत, भजन, आदि गीतों का विशेष योगदान रहा है।

सुगम संगीत के संबंध में कुछ विद्वानों के विचार इस प्रकार से है :

गोपाल शंकर गोलवलकर के अनुसार -

रसानुकूल शब्द तथा भाव अनुकूल स्वर संयोजन को ही सुगम संगीत कहा जाता है। शास्त्रीय संगीत स्वर प्रधान और सुगम संगीत शब्द प्रधान है। सुगम संगीत विधा को ललित संगीत, काव्यसंगीत अथवा भावसंगीत अथवा उचित होगा।[19]

एस. एन. वर्मा के अनुसार -

सुगम संगीत तीन बातों पर निर्भर करता है। धुन में ऐसे गूण हों, जो हमें सांत्वना प्रदान कर सके, शब्द ऐसे हो जो हमारे सामने जीवन का विश्लेषण करने में सक्षम हों, और पोषण कर सके। [20]

शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत और सुगम संगीत तीनों विधाओं में 'गीत' यह आवश्यक घटक है। शब्द, स्वर, और ताल यह बंदिश (गीत) रचना के मुल घटक है। इन गीतों को तीनों विधाओं के अनुरूप विस्तार कर निर्मित या प्रस्तुत किया जाता है। किंतू तीनों विधाओं में इसके विस्तार की शैली भिन्न-भिन्न है।

गीत की आवश्यकता और महत्व -

संगीत का प्रथम अंग 'गीत' है। 'गीत' गाने की हमेशा से परंपरा रही है। कहा जाता है की मनुष्य के साथ ही गीत का जन्म हुआ है। गीत हमारे जीवन से जुड़े हुए है। हमारे हृदय में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। ये प्रत्येक युग में मनुष्य के साथी रहे है। गीत विविध रूपों में आदि काल से अपनी छटा बिखेरते हुए दिखते है जैसे - गीत, गजल, नवगीत, प्राचीन, आधुनिक गीत लोक शैली के गीत इत्यादि।

गीत से ही हमारी संस्कृति की पहचान होती है। हमारी पूजा अर्चना, हमारे त्यौहार, समारोह, कार्यक्रम इत्यादि मंगल अवसरो पर गीत गाने की प्रथा है। इनके बिना कोई भी कार्य अधूरा लगता है। कॅं. विलियड कहते है की - "किसी भी राष्ट्र की आत्मा उनके गीत में जींदा रहती है"। [21]

गीत के घटक (स्वर, शब्द, ताल) -

शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत और सुगम-संगीत तिनो विधाओं में गीत के इन तिनो घटकों (स्वर, शब्द, ताल) का स्वरूप अलग अलग है। केवल शब्द रचना से गीत की रंजकता संभव नाही है आपितू स्वर, ताल और छंद के समूह से शब्द रचना रंजक होती है और तब वह गीत कहलाता है। गीत को ताल तथा राग के स्वराधार की आवश्यकता होती है जिससे राग को एक निश्चित आकर मिलता है। राग गायन शास्त्रीय संगीत का मुख्य केंद्र है। राग के अंतर्गत 'बंदिश' है और बंदिश के माध्यम से ख्याल गायन किया जाता है। शास्त्रीय संगीत यह प्रथमतः स्वरानुभव होत है और शब्द उसे पूरक होते है। सूर आगे और शब्द पीछे ऐसा शास्त्रीय संगीत के संदर्भ में कहा जाता है। इस विधा की बंदिशो में इकार, आकार युक्त शब्दयोजन से राग प्रस्तुत किया जाता है जैसे-सखी, प्रिया, सैया, ननदिया। बंदिश की लय उसके चलन, उसकी बनावट पर अवलंबीत होती है। यादि बंदिश जलद, तान युक्त है तो दूत लय का प्रयोग किया जाता है। ज्यादातार मध्यलय में गाय जाता है। त्रिताल, एकताल, झपताल आदि तालो का प्रयोग होता है। उपशास्त्रीय गीत प्रकारों की बंदिशो में स्वर के साथ-साथ शब्दों का भी महत्व बराबर का होता। यहाँ शब्द इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि वह इस रचना प्रकार के भाव का अर्थ प्रकट करते है। इस विधा की रचना प्रकार की बनावट में आनेवाले स्वरवाक्यों को शब्दों के सहारे ही प्रस्तुत किया जाता है। दादरा, कहरवा, दीपचंदी इत्यादि तालों का प्रयोग लगभग सभी उपशास्त्रीय गीत प्रकारों मे प्रयोग किया जाता है। सुगम संगीत यह शब्द प्रधान संगीत है। स्वरों की एक विशिष्ट प्रकार की धुन शब्दों के भावों के अनुसार बनाई जाती है, जिससे शब्द और भी उभरकर आते है। ताल की दृष्टि से दादरा, कहरवा, रुपक, धुमाल इत्यादि ताल प्रयोग में लाते है।

निष्कर्ष -

गीत यह मानव जीवन पर सुधार, विकास, आत्मविश्वास, बढ़ाने में अपनी अहं भूमिका निभाता है। मधुर गीत सुनने से चित्त प्रसन्न हो जाता है। गीत यह तीनों विधाओं में विदमान है। शब्द, स्वर, लय, ये आवश्यक घटक है। इन घटकों का कम अधिक प्रयोग उस विधा के नियमों तथा शस्त्र पर निर्भर करता है। शास्त्रीय संगीत मे बंदिश, उपशास्त्रीय संगीत मे 'धुन' तथा सुगम संगीत में गीत कहा जाता है। शास्त्रीय संगीत मे 'गीत' (बंदिश) नियमबद्ध होती है। उपशास्त्रीय में वह (गीत) थोड़ा बंधनों से शिथिलता पाता है, वह सुगम संगीत में 'गीत' मुक्त विहार करता है। गीत संक्षिप्त होकर भी उसका कार्य महान है।

संदर्भ :

1. चौधरी, डॉ। सुभद्रा (2000), संगीत रत्नाकर (पं. शारंगदेव, श्लोक सं. 29) पू.सं.12
2. सिंह, डॉ. संगीता (2009), उत्तर भारतीय संगीत में तंत्र वाद्यों का स्थान एवं उपयोगिता, पृ.सं.१
3. चौधरी, डॉ। सुभद्रा (2000), संगीत रत्नाकर (पं. शारंगदेव, श्लोक सं. 29) पृ.सं.12
4. सिंह, डॉ. संगीता (2009), उत्तर भारतीय संगीत में तंत्र वाद्यों का स्थान एवं उपयोगिता, पृ.सं.१

5. वही पृ.सं.२
6. भारतीय संगीत, स्वरूप व प्रयोजन, श्री. कृष्णचंद्र ज्ञाते, पृ.सं.२१
7. १, अ. ४, सं. र.
8. संगीत मैनुअल, डॉ. मृत्युंजय शर्मा, पृ.सं.२०१
9. पं. शारंगदेव संगीत रत्नाकर, संगीत विशारद, वसंत, पू. सं.२२
10. नालंदा विशाल शब्द सागर, पृ.सं.३२१
11. लोकभारती प्रामाणिक हिन्दी कोश, पृ.सं.२९१
12. द इन्साइक्लोपीडिया, हिन्दी शब्द कोष, पृ.सं.३४९
13. हिन्दी विश्वकोष, पृ.सं.४९७
14. डॉ. गर्ग, मुकेश - शास्त्रीय संगीत और फिल्म, पृ.सं.२४
15. डॉ. प्रभा अत्रे - स्वरमयी, पृ.सं.३७
16. श्रीमती कुसुम शेंडे, मुक्ता संगीत संवाद, लेख - उपशास्त्रीय संगीत और उसके भेद पृ.सं.३७०
17. डॉ. सुधा सहगल और डॉ. मुक्ता, बेगम अख्तर व उपशास्त्रीय संगीत पृ.सं.२,३
18. लावण्या कीर्ति काव्य संगीत संजीवनी, पृ.सं.२४
19. गोलवलकर, गोपाल शंकर - सुगम संगीत शब्द प्रधान गायकी, संगीत दिसम्बार २००४, पृ.सं.५१
20. वर्मा, एस. एन - दर्द भरी गायकी का प्रतीका तलत महमूद, संगीत, जून - २००३
21. अशोक रानाडे, संगीत विचार, पृ.सं.३०२